भारत में सहकारिता आंदोलन- एक संक्षिप्त इतिहास

एक विधि पारित किए जाने के माध्यम से औपचारिक सहकारी संरचना के अस्तित्व में आने से पूर्व भी, भारत के कई हिस्सों में सहकारिता और सहकारिता कार्यकलाप की प्रथा प्रचलित थी । ग्राम समुदायों द्वारा सामूहिक रूप से स्थाई परिसम्पत्तियों के निर्माण जैसे कि गाँव के टैंक अथवा गांव के जंगल जिन्हें सामान्यतया देवराई या वनराई कहा जाता था, प्रचलन में थे । इसी प्रकार, समूहों द्वारा संसाधनों की पूलिंग जैसे कि फसल काटने के बाद खाद्यान्न ताकि अगली फसल से पहले जरूरतमंद लोगों को बांटा जा सके अथवा समय-समय पर छोटे-छोटे अंशदानों से नकदी एकत्र करना ताकि समूह के जरूरतमंद लोगों को दी जा सके जैसे कि, तत्कालीन मद्रास प्रेसीडेंसी में चिटफंड; त्रावणकोर में कुरीज; कोल्हापुर में बीसीज आदि की परंपरा थी । कोल्हापुर के 'फड्स' जहां किसानों ने बॉध बनाकर पानी को रोका और पानी के समान रूप से वितरण को सुनिश्चित करने पर और साथ ही साथ सदस्यों की फसल कटाई और उत्पाद को बाजार तक ले जाने पर भी सहमति बनाई, और 'लेंस' जो संयुक्त रूप से खेती करने के लिए किसानों की सालाना पार्टनरशिप थी और की गई मेहनत तथा उनकी पशु शक्ति के अनुपात में फसल उत्पाद को बांटना आदि इसी प्रकार के सहकारिता के उदाहरण हैं ।

19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में कृषिगत दशाओं और कृषकों को वित्त उपलब्ध कराने के लिए संस्थागत प्रबंधों के अभाव के कारण विपदा और असंतोष बढ़ा । अकाल आयोग 1880 और इसके 20 वर्षों बाद अकाल कमीशन 1901 दोनों ने ही भारतीय किसानों की विकट कर्जदारी को रेखांकित किया जिसके फलस्वरूप कई मामलों में इस दौरान किसानों की जमीन साहूकारों के कब्जे में चली गई । डेकन दंगे और व्याप्त असंतोष के वातावरण के फलस्वरूप सरकार ने बहुत सी पहल की किंतु कानूनी उपायों से स्थिति में पर्याप्त सुधार नहीं हुआ ।

कृषि बैंकों का प्रस्ताव पहली बार वर्ष 1858 में और फिर 1881 में आगे लाया गया । यह प्रस्ताव जस्टिस एम जी रनाडे के साथ परामर्श में श्री विलियम वेडबर्न, अहमदनगर के जिला जज द्वारा लाया गया था, किंतु यह स्वीकार नहीं हुआ । मार्च 1892 में श्री फेडरिक निकोलसन को मद्रास प्रेसीडेंसी के गवर्नर द्वारा इस प्रेसीडेंसी (संभावना की जांच हेतु) में शुरू किए जाने के लिए कृषि एवं अन्य भूमि बैंक की प्रणाली लाए जाने हेतु कहा गया और उन्होंने अपनी रिपोर्ट दो खंडों में 1895 एवं 1897 में प्रस्तुत की ।

वर्ष 1901 में अकाल आयोग ने म्यूचुअल क्रेडिट एसोसिएसनों के माध्यम से ग्रामीण कृषि बैंकों की स्थापना और ऐसे उपायों की सिफारिश की जो नार्थ वेस्टर्न प्रोविंस और अवध सरकार द्वारा किए जा सकते थे । बड़ी संख्या में लोगों के एक साथ जुड़ने के पीछे एक अंतर्निहित विचार एक नए और मूल्यवान रक्षातंत्र का स्वैच्छिक रूप से सृजन करना था । व्यक्तियों के बजाय समूहों को ऋण देने की गारंटी देने में सक्षम एक सशक्त एसोसिएशन का होना प्रमुख लाभों में शामिल था । इस आयोग ने कृषि बैंकों से संबंधित सिद्धांतों के सुझाव भी दिए ।

कोआपरेटिव क्रेडिट सोसाइटी एक्ट, 1904- पहला अधिनियम

इन घटनाक्रमों का संज्ञान लेते हुए और कोआपरेटिव सोसाइटीज के लिए एक कानूनी आधार उपलब्ध कराने हेतु, श्री निकोलसन को एक सदस्य के रूप में शामिल करते हुए सरकार द्वारा आगे जांच और आगे की कार्रवाई की संस्तुति हेतु एडवर्ड लॉ कमेटी की नियुक्ति की गई । इस समिति की संस्तुतियों के आधार पर कोआपरेटिव सोसाइटी बिल 25 मार्च 1904 को अधिनियमित किया गया । जैसा कि इसके नाम से ही पता चलता है, कोआपरेटिव क्रेडिट सोसाइटी अधिनियम क्रेडिट कोआपरेटिव तक ही सीमित था । वर्ष 1911 तक 5,300 सोसाइटियां मौजूद थीं, जिनकी सदस्यता 3 लाख से अधिक थी । 1904 एक्ट के अंतर्गत पहले 5-6 वर्षों में भारत में रजिस्टर हुई पहली कुछ कोआपरेटिव सोसाइटीज इस प्रकार हैं:-राजहौली विलेज बैंक, जोरहाट, जोरहाट कोआपरेटिव टाउन बैंक एवं चरिगांव विलेज बैंक, जोरहाट, असम (1904), तिरूर प्राइमरी एग्रीकल्चरल कोआपरेटिव बैंक लि., तमिल नाडु(1904), एग्रीकल्चर सर्विस कोआपरेटिव सोसाइटी लि. देवगांव, पिपरिया, म.प्र.(1905), बेंस कोआपरेटिव थ्रिफ्ट एंड क्रेडिट सोसाइटी लि., पंजाब (1905), बिलीपाडा सर्विस कोआपरेटिव सोसाइटी लि.,

उड़ीसा (1905), भारत सरकार सेक्रेटरिएट कोआपरेटिव थ्रिफ्ट एंड क्रेडिट सोसाइटी (1905), कंगिनहाल व्यवसाय सेवा सहकारी बैंक लि., कर्नाटक (1905), कसाबे टडवाले कोआपरेटिव मल्टी परपज सोसाइटी, महाराष्ट्र (1905), प्रीमियर अरबन क्रेडिट सोसाइटी आफ कोलकता, वेस्ट बंगाल (1905), चित्तूर कोआपरेटिव टाउन बैंक, आंध्रप्रदेश (1907), रोहिका यूनियन आफ कोआपरेटिव क्रेडिट सोसाइटी लि., बिहार (1909) । इस अधिनियम के तहत कई नान क्रेडिट पहल भी सामने आई जैसे कि मद्रास में ट्रिपलीकेन सोसाइटी, जो कि धारवाड और हुबली में एक उपभोक्ता स्टोर, वीवर क्रेडिट कोआपरेटिव चलाती थी और जो सूत का धागा आदि के रूप में क्रेडिट देती थी । तथापि ये शहरी साख समितियों के रूप में रजिस्टर थी ।

1904 के अधिनियम में समितियों के गठन, सदस्यता हेतु पात्रता, पंजीकरण, सदस्यों पर देनदारी, लाभ का निपटान, सदस्यों के शेयर और हित, समितियों के विशेषाधिकार, सदस्यों के प्रति दावे, लेखा-परीक्षा, निरीक्षण और पूछताछ, विघटन, करारोपण से छूट और नियम बनाने की शक्ति के प्रावधान किए गए । प्रचालन और प्रबंधन संबंधी अन्य सभी मुद्दे, स्थानीय सरकार पर छोड़ दिए गए, जैसे कि सहकारी समितियों के उपयुक्त नियम और उपनियम बनाना । सहकारिता विकास में तत्परता और प्रेरकता के लिए रजिस्ट्रार की व्यवस्था, जिसे विशेष आधिकारिक व्यवस्था के रूप में सोचा गया था और जिस पर विशेष प्रशिक्षण एवं उपयुक्त दृष्टिकोण, क्षमता वाले अधिकारियों की तैनाती की जानी थी, सहकारिकता समितियां अधिनियम, 1904 का परिणाम था ।

सहकारिता समितियां अधिनियम, 1912

सहकारी समितियों की संख्या में आशा से अधिक वृद्धि होने के साथ ही सहकारी समितियां अधिनियम,1912 एक जरूरत बन गया और इस अधिनियम के अंतर्गत सहकारी समितियां उनके सदस्यो को नॉन क्रेडिट सेवायें उपलब्ध कराने के लिए, बनाई जा सकती थीं । इस अधिनियम में सहकारी समितियों के फेडरेशन का भी प्रावधान किया गया ।

इस अधिनियमन के साथ ही, साख क्षेत्र में शहरी सहकारी बैंकों ने स्वयं को केंद्रीय सहकारी बैंकों के रूप में बदल लिया जिसमें प्राथमिक सहकारी समितियां और व्यक्तियों को उनके सदस्यों के रूप में लिया गया । इसी प्रकार नॉन क्रेडिट क्रियाकलाप भी सहकारिता के रूप में आयोजित किए गए जैसे कि क्रय और विक्रय संघ, विपणन समितियां और गैर कृषि क्षेत्र में हैंडलूम बुनकर और अन्य शिल्पकार ।

सहकारिता पर मैक्लगन समिति (1914)

बैंकिंग संकट और प्रथम विश्व युद्ध दोनों ने ही सहकारिता को दुष्प्रभावित किया । यद्यपि सहकारी समितियों में सदस्यों की जमा राशि बहुत तेजी से बढ़ी, युद्ध के कारण निर्यात और नकदी फसलों के मूल्य प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुए जिसके फलस्वरूप प्राथमिक कृषि समितियों के ऋणों की over dues बढ़ गई । इस स्थिति से निपटने के लिए अक्टूबर, 1914 में सरकार द्वारा सर एडवर्ड मैक्लगन के अधीन सहकारिता पर एक समिति नियुक्त की जिसका उद्देश्य स्थिति का आंकलन करना और सहकारी समितियों के भविष्य हेतु संस्तुतियां करना था । इस समिति की संस्तुतियाँ जिनका विवरण अनुबंध 3 में दिया गया है, का संबंध मुख्यतया क्रेडिट सहकारी समितियां से है । इसने प्रत्येक राज्य में एक तीन स्तरीय संरचना के निर्माण की अनुशंसा की जिसमें आधार स्तर पर प्राथमिक संस्थाएं, मध्यम स्तर पर केंद्रीय सहकारी बैंकों और शीर्ष स्तर पर प्रांतीय सहकारी बैंक की परिकल्पना की जिसका आधारभूत उद्देश्य अल्पावधि और मध्यम अवधि का वित्त उपलब्ध कराना था । इन संस्थाओं के सहकारी आधार और प्रशिक्षण एवं सदस्यों की शिक्षा एवं रजिस्ट्रार एवं उनके स्टाफ को प्रशिक्षण दिया जाना सुनिश्चित किए जाने पर बल दिया गया ।

1912 के अधिनियम के बाद पहली सहकारी आवासन समिति, मद्रास सहकारी संघ वर्ष 1914 में, बाम्बे केन्द्रीय सहकारी संस्थान वर्ष 1918 में और बंगाल, बिहार, उड़ीसा, पंजाब आदि में ऐसी ही संस्थाएँ बनीं । उपभोक्ता सहकारी समितियों और बुनकर सहकारी समितियों को छोड़कर अन्य गैर कृषिगत साख सहकारी समितियों ने सामान्यत: अच्छा काम किया और इस अवधि के दौरान वे मजबूत हुईं और उनके कार्यों में वृद्धि हुईं ।

भारत सरकार अधिनियम, 1919

वर्ष 1919 में सुधार अधिनियम के पारित होने के साथ ही सहकारिता को एक विषय के रूप में प्रांतों को अंतरित कर दिया गया। वर्ष 1925 के बाम्बे कोआपरेटिव सोसाइटीज एक्ट, जो पारित किया जाने वाला पहला प्रांतीय अधिनियम था, में अन्य बातों के साथ-साथ एक - व्यक्ति - एक मत का सिद्धांत लागू किया गया ।

कृषि साख परिदृश्य एक सरोकार का विषय था और विभिन्न प्रांतों में विभिन्न समितियों ने सहकारी बैंकों की समस्याओं की ओर ध्यान दिया । वर्ष 1928 में कृषि संबंधी रायल कमीशन ने भी सहकारिता क्षेत्र की समीक्षा की और अन्य बातों के साथ-साथ भूमि बंधक बैंकों की स्थापना किए जाने की संस्तुति की ।

कृषि और गैर - कृषि नान - क्रेडिट क्षेत्रों में समितियां गठित की गईं किंतु निजी विपणन एजेंसियों और उनके पदाधिकारियों की अनुभवहीनता के कारण उनके संचालन में कठिनाइयां आईं । इसमें शिक्षा एवं प्रशिक्षण हेतु सहकारी संस्थाओं और संघों को सुदृढ़ करने पर बल दिया गया । इस समय का एक महत्वपूर्ण घटनाक्रम वर्ष 1929 में आल इंडिया ऐसोसिशन आफ कोआपरेटिव सोसाइटीज का स्थापित होना था ।

वर्ष 1934 में भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना कृषि साख के लिए बल दिए जाने हेतु एक प्रमुख घटना थी । भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम 1934 में कृषि साख विभाग की स्थापना किया जाना एक आवश्यकता के रूप में था । चूँकि, सहकारी समितियां ग्रामीण विकास का एक चैनल थी, वर्ष 1935 में लोकप्रिय सरकारों के बन जाने के साथ ही ऐसे कार्यक्रम तैयार किए गए जिनमें ग्रामीण कर्जदारी को प्राथमिकता मिली । वर्ष 1937 में नियुक्त मेहता समिति ने बहु उद्देश्यीय सहकारी समितियों के रूप में सहकारी साख समितियों के पुनर्गठन की संस्तुति की ।

द्वितीय विश्व युद्ध के कारण कृषिगत वस्तुओं के दामों में तेजी आई जिसके फलस्वरूप किसानों की आय बढ़ी और परिणामत: सहकारिता समितियों की ओवर ड्यूज कम हुई । घरेलू उपभोग और साथ ही कच्ची सामग्रियों के लिए अनिवार्य वस्तुओं की कमी के समाधान हेतु सरकार ने उत्पादकों से वस्तुओं की अधिप्राप्ति के लिए और इसके साथ ही राशनिंग के उपाय अपनाए जिसके लिए उसने सहकारिता समितियों की सेवाओं का उपयोग करने का निर्णय लिया । इससे बहु उद्देश्यीय सहकारी समितियों की प्रगति में तेजी आई ।

1939-1945 के बीच की अवधि में शहरी सहकारी साख समितियों की प्रगति को आगे और बल मिला । कई समितियों ने बैंकिंग कार्य भी शुरू किए और समय के साथ ही इनके विस्तार और कार्यों में प्रगति हुई तथा इनके कार्यों में विविधता आई ।

मल्टी यूनिट सहकारिता समितियां अधिनियम 1942

ऐसी सहकारी समितियों जिनमें एक से अधिक राज्यों से सदस्य सम्मिलित होते थे जैसे कि केंद्र सरकार द्वारा प्रायोजित वेतन अर्जनकर्ताओं की सहकारी साख समितियों के उद्भव के साथ ही ऐसी मल्टी यूनिट या मल्टी स्टेट सहकारी समितियों के लिए एक समर्थकारी सहकारिता कानून की जरूरत महसूस हुई । तदनुसार वर्ष 1942 में मल्टी यूनिट कोआपरेटिव सोसाइटी एक्ट पारित हुआ जिसमें सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए केंद्रीय रजिस्ट्रार सहकारिता समितियों के अधिकार राज्य रजिस्ट्रार को प्रत्यायोजित कर दिए गए । वर्ष 1944 में गाडगिल समिति ने ऋणों के अनिवार्य रूप से समायोजन और ऐसे स्थानों पर कृषि साख निगमों की स्थापना की संस्तुति की जहाँ पर सहकारी एजेंसियां मजबूत नहीं थीं ।

सहकारिता आयोजना समिति (1945)

वर्ष 1945 में आर जी सराया की अध्यक्षता में सहकारी आयोजना समिति का गठन किया गया । इस समिति ने आर्थिक आयोजना को प्रजातांत्रिक बनाने के लिए सहकारी समितियों को सबसे उपयुक्त माध्यम पाया और आर्थिक विकास के प्रत्येक क्षेत्र की जांच की ।

स्वतंत्रता पूर्व घटनाक्रम

वर्ष 1946 में सरदार वल्लभ भाई पटेल से प्रेरित होकर और श्री मोरारजी देसाई एवं श्री त्रिभुवनदास पटेल के नेतृत्व में गुजरात के खेड़ा जिले के दुग्ध उत्पादक 15 दिन की हड़ताल पर चले गए । उनकी ओर से दुग्ध आपूर्ति न किए जाने के कारण बाम्बे सरकार को अपने उस आदेश को वापस लेने के लिए विवश होना पड़ा जिसमें एक प्राइवेट डेयरी पॉलसन को एकाधिकार अधिप्राप्ति अधिकार दिए गए थे । उस समय एक इतिहास रचा गया जब दो प्राथमिक ग्राम दुग्ध उत्पादक समितियां अक्टूबर, 1946 में पंजीकृत हुईं । इसके तुरंत बाद 14 दिसम्बर, 1946 को खेड़ा जिला सहकारी दुग्ध उत्पादक मिल्क यूनियन पंजीकृत हुई जिसे अमूल के नाम से जाना गया ।

वर्ष 1947 में रजिस्ट्रार कांफ्रेंस ने संस्तुति की, कि प्रांतीय सहकारी बैंकों का पुनर्गठन किया जाए ताकि केंद्रीय बैंकों के माध्यम से प्राथमिक समितियों को अधिक सहायता दी जा सके । पहली बार विपणन के साथ क्रेडिट को प्रभावी रूप से जोड़े जाने और उदार ऋणों एवं सब्सिडीज के माध्यम से सहायता उपलब्ध कराने के लिए विचार किया गया ताकि बड़ी संख्या में गोदामों और प्रोसिंग प्लांट्स की स्थापना की जा सके ।

यहां पर कुछ ऐसे घटनाक्रमों का उल्लेख करना उपयुक्त होगा जो बाम्बे में और साथ ही सहकारिता समितियों में घटित हुई और जिनका सहकारी क्षेत्र में प्रभाव रहा । श्री वैकुंठ भाई मेहता ने बाम्बे सरकार में सहकारिता के प्रभारी मंत्री के रूप में कार्यभार संभाला जिसके बाद राज्य में सहकारिता आंदोलन को गति प्राप्त हुई । श्री जनार्दन मदन की अध्यक्षता में सहकारिता शिक्षा और प्रशिक्षण संबंधी एक समिति ने सहकारिता शिक्षा कार्यक्रमों और शिक्षा फंड की स्थापना हेतु संस्तुति की । कृषि साख संगठन समिति जिसके अध्यक्ष सर मणिलाल नानावती थे, ने कृषि वित्त के क्षेत्र में राज्य सहायता और सभी साख सहाकरी समितियों को बहुउद्देशीय सहकारिता समितियों में बदलने की सिफारिश की । इसने एक तीन त्रिस्तरीय सहकारी साख बैंकिंग प्रणाली और विभिन्न सब्सिडी की संस्तुति भी की ।

स्वतंत्रता पश्चात् के घटनाक्रम

वर्ष 1947 में भारत की आजादी के पश्चात् सहकारिता विकास को गति प्राप्त हुई जिसमें योजना आयोग द्वारा तैयार की गई विभिन्न योजनाओं में सहकारी समितियों को एक महत्वपूर्ण भूमिका दी गई ।

प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56) में भारत में सहकारिता आंदोलन के विजन के बारे में विस्तार से बताया गया और आर्थिक एवं राजनीतिक विकास के लिए अधिमान्य संगठनों के रूप में सहकारिता समितियों और पंचायतों पर बल दिए जाने का औचित्य बताया गया । इस योजना में सामुदायिक विकास के सभी पहलुओं को शामिल करने के लिए संगठन की सहकारी पद्धति को अपनाने पर बल दिया गया । इसमें शहरी सहकारी बैंकों, कामगारों की औद्योगिक सहकारिता समितियों, उपभोक्ता सहकारिता समितियों, आवासन सहकारिता समितियों, सहकारी प्रशिक्षण एवं शिक्षा के माध्यम से जानकारी के प्रसार का प्रावधान किया गया तथा यह संस्तुति की गई कि प्रत्येक सहकारी विभाग सहकारिता समितियों की स्थापना की नीति का पालन करें ।

अखिल भारतीय ग्रामीण साख सर्वेक्षण समिति (1951)

इस समय की एक महत्वपूर्ण पहल सरकार द्वारा गोरवाला समिति की स्थापना किया जाना था जिसे आमतौर पर अखिल भारतीय ग्रामीण साख सर्वेक्षण समिति कहा जाता था । यह समिति वर्ष 1951 में नियुक्त की गई और इसने अपनी रिपोर्ट 1954

में प्रस्तुत की । समिति ने पाया कि देश के अधिकांश भागों में सहकारी समितियां नहीं हैं और जिन क्षेत्रों में हैं, वहां भी कृषि जनसंख्या का एक बड़ा भाग इसकी सदस्यता में शामिल नहीं है । ऐसे क्षेत्रों में जहां सदस्यता है, वहां भी साख जरूरतें (75.2%) अन्य स्रोतों से पूरी की जाती हैं ।

इस समिति ने ग्रामीण साख की एक समेकित प्रणाली शुरू करने, सहकारी समितियों की शेयर पूंजी में सरकार की भागीदारी और उनके बोर्ड में सरकारी अधिकारियों की नियुक्ति की सिफारिश की ताकि उनके प्रबंधन में हिस्सेदारी हो सके । इस समिति ने प्रशिक्षण के महत्व पर भी जोर दिया । भारतीय स्टेट बैंक की स्थापना किया जाना एक अन्य संस्तुति थी ।

सरकार और चुनिंदा प्रतिनिधियों ने इस आधारभूत दृष्टिकोण और गोरवाला समिति की प्रमुख संस्तुतियों को स्वीकार किया । संघ सरकार ने इम्पीरियल बैंक में बड़ी अभिरुचि जाहिर की और इसे भारतीय स्टेट बैंक में बदल दिया । नेशनल कोआपरेटिव डेवलपमेंट एंड वेयरहाउसिंग बोर्ड की स्थापना की गई । भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम में संशोधन किया गया ताकि यह सहकारी साख संस्थाओं के निर्माण में एक सक्रिय भूमिका निभा सके ।

वर्ष 1956 में पटना में संपन्न हुई आल इंडिया कोआपरेटिव कांग्रेस में सहकारी समितियों के बोर्ड आफ डायरेक्टर्स में राज्य की भागीदारी और सरकार के प्रतिनिधित्व के सिद्धांत को स्वीकार किया गया । इसमें यह संकल्प लिया गया कि ऐसे नामांकनों की संख्या कुल डायरेक्टर्स की संख्या का एक तिहाई से अधिक या तीन से अधिक नहीं होना चाहिए, उनमें से जो भी कम हो और यह ऐसी सहकारिता समितियों पर भी लागू हो जिनमें शेयर कैपिटल कुल शेयर कैपिटल का 50% से अधिक होती है । केंद्र सरकार द्वारा इस सिफारिश को स्वीकार कर लिया गया ।

वर्ष 1953 में भारत सरकार और भारतीय रिजर्व बैंक ने सहकारी समितियों के कार्मिकों के लिए आवश्यक प्रशिक्षण सुविधाओं की स्थापना हेतु केंद्रीय सहकारिता प्रशिक्षण समिति की संयुक्त रूप से स्थापना की । अखिल भारतीय सहकारिता संघ और राज्य सरकारिता संघों को सहकारी संगठनों के सदस्यों और पदाधिकारियों के प्रशिक्षण का कार्य सौंपा गया ।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956-61) में राष्ट्रीय नीति के एक केंद्रीय लक्ष्य के रूप में 'नियोजित विकास की एक स्कीम के भाग के रूप में सहकारिता क्षेत्र के निर्माण' पर जोर दिया गया । इसका उद्देश्य आर्थिक कार्यकलाप का आधार बनने के लिए सहकारिता समितियों को अधिकाधिक रूप से सक्षम बनाना था । इस योजना में अखिल भारतीय ग्रामीण साख सर्वेक्षण समिति की संस्तुतियों के आधार पर सहकारिता विकास के कार्यक्रम बनाए गए। यह परिकल्पना की गई कि एक गांव में प्रत्येक परिवार कम से कम एक सहकारी समिति का सदस्य अवश्य हो । किसानों को बेहतर सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए क्रेडिट और नान - क्रेडिट समितियों को जोड़े जाने का लक्ष्य भी रखा गया । विभिन्न स्तरों पर सहकारिता संस्थाओं के साथ राज्य की भागीदारी, जिसका अनिवार्य आधार सहायता था और न कि हस्तक्षेप या नियंत्रण, की सिफारिश की गई और सहकारिता समितियों में राज्य की भागीदारी को आसान करने के लिए इस योजना में नेशनल एग्रीकल्चरल क्रेडिट लांग टर्म फंड की भी संस्तुति की गई । इस अवधि के दौरान केंद्र सरकार द्वारा नेशनल कोआपरेटिव डेवलपमेंट फंड की भी स्थापना की गई ताकि देश में नान-क्रेडिट कोआपरेटिव संस्थाओं की शेयर कैपिटल में अंशदान देने के उद्देश्य से ऋण लेने हेतु राज्यों को सक्षम बनाया जा सके । वर्ष 1956 के औद्यागिक नीति सकल्प में उन उद्यमों को राज्य सहायता की जरूरत पर बल दिया गया जो औद्योगिक और कृषि

उद्देश्य से सहकारिता आधार पर बने थे और इसका उद्देश्य 'एक विस्तृत और प्रगतिशील सहकारिता क्षेत्र का निर्माण करना था।'

वर्ष 1956 में श्री एस.टी.राजा की अध्यक्षता में सहकारिता कानून संबंधी समिति ने राज्य सरकारों के विचार हेतु एक माडल बिल की सिफारिश की । इस समय का एक अन्य महत्वपूर्ण घटनाक्रम, जिसने सहकारिता क्षेत्र को प्रभावित किया, नेशनल डेवलपमेंट काउंसिल संकल्प (1958) था । सहकारी नीति संबंधी इस संकल्प में इस बात पर बल दिया गया कि एक प्राथमिक यूनिट के रूप में ग्राम समुदाय के आधार पर सहकारी समितियों का गठन किया जाना चाहिए और यह कि ग्राम सहकारिता समितियों तथा पंचायतों के बीच गहन समन्वयन होना चाहिए । इस संकल्प में यह भी संस्तुति की गई कि मौजूदा सहकारी विधान की प्रतिबंधात्मक विशेषताओं को हटाया जाना चाहिए । कई राज्य सरकारों ने इस माडल बिल की सिफारिशों के फलस्वरूप अपने अधिनियमों में संशोधन किये ।

इस द्वितीय योजना में सहकारी विपणन और कृषि उत्पादों की प्रोसेसिंग, सहकारिता विकास की समेकित स्कीम का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बनी । सभी राज्यों में लगभग 1900 प्राथमिक विपणन समितियां बनीं और राज्य विपणन फेडरेशन की स्थापना हुई और केंद्र के स्तर पर नेशनल कोआपरेटिव मार्केटिंग फेडरेशन बनी । विपणन सहकारी समितियों और कृषि सहकारिता समितियों ने किसानों को क्रेडिट और इनपुट देकर और साथ ही उनके बढ़े हुए उत्पादों की प्रोसेसिंग के द्वारा हरित क्रांति को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी ।

तीसरी पंचवर्षीय योजना (1961-69) में इस पर बल दिया गया कि 'सहकारिता को आर्थिक कार्यकलाप की सभी शाखाओं विशेषकर कृषि, लघु सिंचाई, लघु उद्योग एवं प्रोसेसिंग, विपणन, वितरण, ग्रामीण विद्युतीकरण, आवासन एवं निर्माण और स्थानीय समुदायों के लिए अनिवार्य सुविधाओं के प्रावधान के क्षेत्र में अधिकाधिक रूप से एक प्रमुख आधार बनना चाहिए । यहां तक कि मध्यम और बड़े उद्योगों और परिवहन क्षेत्र में अधिकाधिक कार्यकलापों को सहकारिता आधार पर शुरू किया जा सकता है ।'

छठे दशक के मध्य से एग्रो प्रोसेसिंग कोआपरेटिव्ज विशेषकर शुगर और स्पिनिंग के क्षेत्र में संख्या और अंशदान की दृष्टि से बढ़ी और यह मुख्यत: सरकार द्वारा सहकारी क्षेत्र में बड़े पैमाने के उद्योगों को प्रोत्साहित करने की नीति और वित्तीय संस्थाओं से आवधिक ऋण सहायता के कारण हुआ ।

एनडीडीबी की स्थापना के साथ ही दुग्ध के क्षेत्र में सहकारिता समितियों के आनंद पैटर्न को दोहराने के लिए भारतीय दुग्ध सहकारी आंदोलन को गति प्राप्त हुई । बाद में एनडीडीबी खाद्य तेलों के क्षेत्र में भी आगे आया ।

वर्ष 1962 में भारत चीन युद्ध के बाद उपभोक्ता सहकारी संरचना और सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) को मजबूती मिली। एक नीति के रूप में सरकार ने उचित दर दुकानों के आवंटन में उपभोक्ता अथवा अन्य सहकारी समितियों को वरीयता देने का निर्णय लिया और कुछ राज्यों ने केवल सहकारी समितियों को नई उचित दर दुकानों का आवंटन किया ।

शहरी सहकारी साख समितियों में सार्वजनिक जमा बढ़ने के साथ ही यह आवश्यकता महसूस की गई कि इन्हें भारतीय रिजर्व बैंक की डिपोजिट इंश्योरेंस स्कीम के तहत बीमा किया जाए । भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम 1934 के चुनिंदा प्रावधानों और बाद में बैंकिंग विनियमन अधिनियम 1949 को सहकारी बैंकों पर 1 मार्च 1966 से लागू किया गया ताकि उनके बैकिंग कार्य को विनियमित किया जा सके और डिपोजिटस की इंश्योरेंस कवरेज हो सके ।

कुछ राष्ट्रीय संस्थाएं जो 1960 में अस्तित्व में आईं

भारत सरकार ने केंद्रीय भूमि बंधक बैंकों के माध्यम से सहकारी समितियों को दीर्घकालीन ऋण उपलब्ध कराने के उद्देश्य से वर्ष 1962 में एग्रीकल्चरल रिफाइनेंस कार्पोरेशन की स्थापना की ।

वर्ष 1963 में संसद के एक अधिनियम द्वारा नेशनल कोआपरेटिव डेवलपमेंट कार्पोरेशन (एनसीडीसी) की स्थापना एक सांविधिक निगम के रूप में की गई । एनसीडीसी की स्थापना से सहकारी विपणन और प्रसंस्करण समितियों की प्रगति में बहुत अधिक तेजी आई ।

अक्टूबर, 1964 में आनंद के दौरे के समय दुग्ध सहकारी समितियों द्वारा लाए गए सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन से प्रभावित होकर, श्री लाल बहादुर शास्त्री, भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री ने एक राष्ट्रीय स्तर के संगठन राष्ट्रीय दुग्ध विकास बोर्ड की स्थापना की बात कही ताकि देश भर में दुग्ध के क्षेत्र में सहकारी समितियां के आनंद पैटर्न को दोहराया जा सके ।

इस अवधि के दौरान कई अन्य महत्वपूर्ण संगठनात्मक घटनाक्रम हुए, जैसे कि विभिन्न राष्ट्रीय सहकारिता फेडरेशन की स्थापना किया जाना और नेशनल कोआपरेटिव यूनियन आफ इंडिया का पुनर्गठन । वर्ष 1967 में पुणे में वैकुंठ मेहता नेशनल इंस्टीच्यूट आफ कोआपरेटिव मैनेजमेंट की स्थापना की गई । इस अवधि का एक महत्वपूर्ण घटनाक्रम उपभोकता सहकारी समितियों की प्रगति होना भी था । इसके साथ-साथ भूमि विकास बैंकों की प्रगति भी तेज हुई और डेयरी, मुर्गीपालन, मत्स्य पालन के लिए ग्रामीण इलेक्ट्रिक सहकारी समितियां और कार्यक्रम तथा श्रम सहकारी समितियों की स्थापना हुई ।

चौथी पंचवर्षीय योजना (1969-1974) में सहकारी लघु अवधि और मध्यम अवधि संरचना को व्यवहार्य बनाने के लिए सहकारी समितियों के पुनर्गठन को उच्च प्राथमिकता दी गई । इसमें सहकारी समितियों को प्रबंधन सब्सिडी और शेयर कैपिटल अंशदान देने के लिए और साथ ही साथ केंद्रीय सहकारी बैंकों के पुनरुत्थान के लिए आवश्यक प्रावधान किए गए । इसमें छोटे उत्पादकों के पक्ष में नीति बनाने की जरूरत भी रेखांकित की गई ।

वर्ष 1965 में मिर्धा समिति ने सहकारी समितियों की यथार्थता निर्धारित करने के लिए मानक तय किए और नकली सहकारी समितियों को समाप्त करने; स्वार्थी हितों को समाप्त करने के लिए मौजूदा सहकारी नियमों की समीक्षा करने के लिए उपाय सुझाए । इस समिति की संस्तुतियों के फलस्वरूप अधिकांश राज्यों में सहकारिता विधान में संशोधन हुए जिसके कारण सहकारी समितियों की स्वायत्तता और प्रजातांत्रिक विशेषताएं नष्ट हुईं ।

पांचवी पंचवर्षीय योजना (1974-1979) में बड़े स्तर पर ओवर-ड्यूज की ओर ध्यान दिया गया । सहकारी विकास के लिए उसकी संस्तुति कार्य नीति में क्षेत्रीय असंतुलनों को ठीक करना और सहकारी समितियों को वंचित लोगों की ओर उन्मुख करने पर विशेष ध्यान देना था । वर्ष 1972 में योजना आयोग द्वारा नियुक्त किए गए एक विशेषज्ञ ग्रुप की संस्तुतियों के आधार पर सहकारी ढांचे में संरचनात्मक सुधार की परिकल्पना की गई । इस योजना में किसान सेवाएं सहकारी समितियों के गठन की संस्तुति की गई, जैसा कि कृषि संबंधी राष्ट्रीय आयोग द्वारा परिकल्पना की गई थी और सहकारी समितियों के व्यावसायिक आधार पर प्रबंधन की जरूरत पर बल दिया गया ।

छठी पंचवर्षीय योजना (1979-1985) में भी ग्रामीण निर्धनों की आर्थिक दशा सुधारने की दिशा में सुव्यवस्थित रूप से निदेशित सहकारी प्रयासों की महत्ता पर बल दिया गया । इस योजना में प्राथमिक कृषि साख समितियों को सशक्त और व्यवहार्य बहु उद्देश्यीय यूनिटों में बदलने के लिए उन्हें पुनर्गठित करने की संस्तुति की गई । इसमें उपभोक्ता और विपणन सहकारी समितियों के बीच संपर्क मजबूत करने का सुझाव भी दिया गया । सहकारी फेडरल संगठनों की भूमिका को मजबूत करना, डेयरी, मत्स्य पालन और लघु सिंचाई सहकारी समितियों के विकास को मजबूत करना, छोटी और मध्यम सहकारी समितियों में जनशक्ति विकास कुछ नियोजित कार्यक्रम थे ।

नाबार्ड अधिनियम, 1981

राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) अधिनियम वर्ष 1981 में पारित हुआ और नाबार्ड की स्थापना सहकारी बैंकों को पुनर्वित्त पोषण सहायता उपलब्ध कराने के लिए और कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्र को क्रेडिट फ्लो बढ़ाने के लिए वाणिज्यिक बैंकों और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के संसाधनों के अनुपूरण के लिए की गई ।

मल्टी स्टेट सहकारी समिति अधिनियम 1984

वास्तविक मल्टी स्टेट समितियों के गठन और कार्यकरण को आसान बनाने और उनके प्रशासन एवं प्रबंधन में एकरूपता लाने के लिए एक व्यापक केंद्रीय विधान लाने के उद्देश्य से मल्टी स्टेट कोआपरेटिव सोसाइटी अधिनियम 1984 अधिनियमित किया गया । इससे पहले का मल्टी यूनिट कोआपरेटिव सोसाइटी ऐक्ट 1942 रद्द कर दिया गया ।

सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-1990) में इस बात का उल्लेख किया गया कि जब कि क्रेडिट के क्षेत्र में चहुंमुखी प्रगति हुई है, ऋणों की कम वसूली और बड़े स्तर पर ओवर-ड्यूज चिंता के विषय रहे हैं । इस योजना में अन्य बातों के साथ-साथ प्राथमिक कृषि साख समितियों की बहुत सी व्यवहार्य यूनिटों के रूप में स्थापना करने; क्रेडिट की फ्लो को बढ़ाने के लिए नीति एवं प्रक्रियाओं में तालमेल और विशेषकर कमजोर वर्गों को इनपुट और सेवाएं सुनिश्चित करने; पूर्वोत्तर क्षेत्र के लिए विशेष कार्यक्रम; शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में उपभोक्ता शहरी आंदोलन को मजबूत करने और व्यावसायिक प्रबंधन के संवर्धन की संस्तुति की गई ।

स्वायत्तता सहकारिता आंदोलन के प्रचारकों की ओर से बढ़ती हुई मांग और सहकारिता विधान में संशोधन के साथ ही सरकार ने वर्ष 1985 में सहकारी समितियों को प्रजातांत्रिक बनाने और व्यवसायीकरण के लिए सहकारिता विधान के संबंध में एक समिति गठित की, जिसके अध्यक्ष श्री के एन अराधनाश्वरन थे । इस समिति ने राज्य सहकारिता अधिनियमों में उन कानूनी प्रावधानों को हटाने की संस्तुति की, जो सहकारी समितियों की स्वायत्तता और प्रजातांत्रिक विशेषताओं को समाप्त करती है । और साथ ही कई ऐसे प्रावधानों की संस्तुति की जो सहकारी समितियों में व्यावसायिक प्रबंधन लाने के लिए प्रजातांत्रिक प्रक्रियाओं को सक्रिय बना सके ।

इसी प्रकार, 1989 में प्रो. ए एम खुसरो की अध्यक्षता में कृषि साख सहकारी समिति ने कृषि और ग्रामीण साख समस्याओं की जांच की और एक प्रमुख सुव्यवस्थित सुधार की सिफारिश की । इस समिति ने संस्तुति की कि आठवी योजना को कमजोर कृषिगत साख समितियों के पुनरुद्धार के लिए योजना होनी चाहिए ।

माडल कोआपरेटिव्स एक्ट 1990

वर्ष 1990 में योजना आयोग द्वारा चौधरी ब्रह्म परकाश की अध्यक्षता में एक विशेषज्ञ समिति नियुक्ति की गई जिसका उद्देश्य सहकारिता आंदोलन की मोटे तौर पर स्थिति की शीघ्रता से समीक्षा करना, भावी दिशा निर्देश सुझाना और माडल कोआपरेटिव एक्ट को अंतिम रूप देना था । इस समिति ने अपनी रिपोर्ट 1991 में प्रस्तुत की । चूँकि, सहकारिता राज्य का विषय है और प्रत्येक राज्य के अपने सहकारिता विधान हैं और उनकी सहकारी समितियां हैं जिनकी सदस्यता उस राज्य तक ही सीमित है, समिति की रिपोर्ट एक ड्राफ्ट माडल कोआपरेटिव लॉ के साथ सभी राज्य सरकारों को उनके विचार और राज्य स्तर पर उसे अपनाने के लिए उनके पास भेजी गई ।

वर्ष 1990 में अर्थव्यवस्था को खोल दिए जाने से और तब से सरकार द्वारा उदारीकृत आर्थिक नीतियों को अपनाए जाने के फलस्वरूप विभिन्न सरकारों, राज्य और केंद्रीय, पर ऐसे बदलाव लाने हेतु दबाव बढ़ता गया ताकि जिनसे सहकारी समितियों को निजी क्षेत्र के साथ प्रतिस्पर्धा करने के लिए एक समान वातावरण उपलब्ध हो सके । आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) में सहकारिता आंदोलन को अधिक स्वायत्तता देकर और इस आंदोलन को प्रजातांत्रिक बनाकर इसे एक स्व - प्रबंधित, स्व-नियमित और आत्मनिर्भर संस्थागत ढांचे के रूप में सहकारिता आंदोलन के विकास पर बल दिया गया । इसमें आर्थिक कार्यकलापों को बढ़ाने के लिए और छोटे किसानों, श्रमिकों, शिल्पकारों, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं के लिए रोजगार के अवसर पैदा करने के लिए सहकारी समितियों की क्षमता बढ़ाने की बात भी कही गई और व्यावसायिक प्रबंधन में सहकारी कार्यकर्ताओं के विकास और प्रशिक्षण पर बल दिया गया ।

समानांतर सहकारी विधान

नौवीं योजना (1997-2002) से आगे, इस योजना के एक भाग के रूप में सहकारी समितियों के बारे में कोई विशेष उल्लेख नहीं किया गया । चूँकि, सहकारिता राज्य का विषय है और मॉडल सहकारिता अधिनियम के अनुसार राज्य सहकारिता अधिनियमों

को संशोधित किए जाने से आई कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए, सहकारिता और सिविल सोसाइटी के एक वर्ग ने आत्मनिर्भर सहकारी समितियों के लिए समानांतर सहकारिता विधान लाने हेतु कार्रवाई शुरू की । आत्मनिर्भर सहकारी समितियां सामान्यत: उन समितियों को कहा जाता है जिन्होंने इक्यूटी अंशदान, ऋण और गारंटी के रूप में सरकार से कोई सहायता प्राप्त नहीं की है । ये अधिनियम मुख्यतया चौधरी ब्रह्म परकाश की संस्तुतियों पर आधारित रहे । दस राज्यों नामत: आंध्र प्रदेश एवं तेलंगाना (1995), मध्य प्रदेश (1999), बिहार (1996), जम्मू और कश्मीर (1999), उडीसा (2001), कर्नाटक (1997), झारखंड (1996), छत्तीसगढ़ (1999) और उत्तरांचल (2003) ने अब तक समानांतर सहकारिता अधिनियम बनाए हैं जो समर्थकारी हैं और सहकारी समितियों की स्वायत्तता और प्रजातांत्रिक कार्यकरण को सुनिश्चित करते हैं ।

मल्टी स्टेट कोआपरेटिव सोसाइटी अधिनियम, 2002

वर्ष 1984 में अधिनियमित मल्टी स्टेट कोआपरेटिव सोसाइटी अधिनियम को माडल कोआपरेटिव एक्ट की भावना के अनुरूप वर्ष 2002 में संशोधित किया गया। राज्य कानूनों से भिन्न जो पहले के कानूनों के साथ सह अस्तित्व में एक समानांतर विधान के रूप में रहा, मल्टी स्टेट कोआपरेटिव सोसाइटी अधिनियम, 2002 पहले के 1984 वाले अधिनियम के स्थान पर लाया गया ।

राष्ट्रीय सहकारिता नीति, 2002

वर्ष 2002 में भारत सरकार ने एक राष्ट्रीय सहकारिता नीति की घोषणा की । इस नीति का उद्देश्य देश में सहकारी समितियों के चहुंमुखी विकास को सुगम करना था । इस नीति में सहकारी समितियों को आवश्यक सहायता, प्रोत्साहन और सहायता उपलब्ध कराने का वायदा किया गया ताकि स्वायत्त, आत्मनिर्भर और प्रजातांत्रिक ढंग से प्रबंधित संस्थाओं के रूप में उनके कार्यकरण को सुनिश्चित किया जा सके और जो अपने सदस्यों के प्रति उत्तरदायी हों तथा राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में एक महतवपूर्ण योगदान कर सकें ।

राज्यों के सहकारिता मंत्रियों के एक सम्मेलन में की गई संस्तुतियों के आधार पर भारत सरकार ने वर्ष 2002 में राष्ट्रीय सहकारिता नीति के कार्यान्वयन के लिए एक कार्य योजना तैयार करने हेतु मंत्रालयी टास्क फोर्स का गठन किया । इस टास्क फोर्स ने सुझाव दिया कि समानांतर कानूनों के स्थान पर एक सिंगल कानून राज्यों में लागू किया जाना चाहिए । इसने अन्य बातों के साथ-साथ यह संस्तुति भी की, कि सहकारी समितियों के अराजनीतिकरण के लिए संसद सदस्यों अथवा विधान सभाओं के सदस्यों को किसी भी सहकारी समिति में किसी पद को धारण करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए ।

कंपनी सुधार अधिनियम, 2002

डॉ. वाई.के. अलघ की अध्यक्षता में एक समिति ने कंपनी अधिनियम 1956 में संशोधन किए जाने की संस्तुति की। इस समिति की संस्तुतियों के आधार पर संसद में प्रोड्यूजर कंपनी बिल लाया गया और यह कंपनी अधिनियम 1956 में पार्ट IXA- प्रड्यूजर

कंपनी के रूप में 6 फरवरी, 2003 को कानून बन गया । पारस्परिक सहायता के सहकारी सिद्धांतों के आधार पर इसमें संस्थागत स्वरूप के एक विकल्प का प्रावधान है जो सहकारी उद्यमों को इस समय उपलब्ध है ।

एनसीडीसी संशोन अधिनियम, 2002

एनसीडीसी अधिनियम को उसके ऋण देने के क्षेत्र को बढ़ाने और उसके निधियन में परिवर्तन लाने के लिए इसे वर्ष 2002 में संशोधित किया गया जिसके कारण यह अधिसूचित सेवाओं, पशुधन और औद्योगिक कार्यकलाप को शुरू कराने और इससे अधिक महत्वपूर्ण सहकारी समितियों को उपयुक्त सेक्युरिटी के मद्दे निधियां देने के कार्यकलाप करने में सक्षम हुआ ।

सहकारी साख संस्थाओं के पुनरुत्थान के लिए टास्क फोर्स

ग्रामीण सहकारी साख प्रणाली को सुचारु बनाने, ग्रामीण साख को तीन वर्षों में तिगुना करने और छोटे एवं सीमांत कृषकों की कवरेज को संस्थागत ऋण देकर पर्याप्त रूप से बढ़ाने के उद्देश्यों से भारत सरकार ने अगस्त 2004 में एक टास्क फोर्स गठित की जिसका कार्य ग्रामीण सहकारी साख संस्थाओं को पुनर्जीवित करने के लिए कार्ययोजना और इस प्रक्रिया को सुगम बनाने के लिए आवश्यक कानूनी उपाय सुझाना था । प्रो. ए वैद्यनाथन की अध्यक्षता में गठित टास्क फोर्स ने संस्तुति की कि कोई भी वित्तीय पुर्नसंरचना जो इस सिस्टम की कमजोरियों के मूल कारणों को दूर नहीं करती है, इसका सतत पुनरुत्थान नहीं करेगी और कानूनी उपायों की जरूरत होगी । इस टास्क फोर्स की संस्तुतियां उसके विचारणीय विषयों के अनुरूप मुख्यतया साख समितियों के पुनरुत्थान तक सीमित रहीं जिसके लिए उसने वित्तीय पैकेज का सुझाव दिया । वैद्यनाथन समिति ने एक ऐसे माडल सहकारिता कानून का भी सुझाव दिया जिसे राज्य सरकारों द्वारा अधिनियमित किया जा सकता था । इस टास्क फोर्स की संस्तुतियों को अभी कार्यान्वित किया जा रहा है । वैद्यनाथन समिति ने दीर्घकालिक सहकारी साख संरचना के संबंध में भी अपनी रिपोर्ट दी है ।